लेखकक अन्यकृति

कुमार	उपन्यास
विडम्बना	गल्प संग्रह
श्रीमद्भगवद्गीता	मैथिली पद्यानुवाद
रुबाइयात-ए-ओमर खैयाम	,, ,,
बाभनक बेटी	उपन्यास
दू पत्र (साहित्य अकादमी पुरस्कार प्राप्त)	उपन्यास
पतन	लघुकाव्य
प्रतीक	कविता-संग्रह
विप्रदास	उपन्यास
विदेश भ्रमण	यात्रावृत्तान्त

संन्यासी

श्री उपेन्द्रनाथ झा 'व्यास'

प्रकाशक
श्री द्विजेन्द्र कुमार झा
श्री भवन, बोरिङ रोड,
पटना-८००००१

तृतीय संस्करण

मूल्य 45/-

मुद्रक
मुरलीधर प्रेस
मुसल्लहपुर हाट
पटना-८००००६

श्रीः

मिथिलावनिकेँ करइछ सिक्त अनेक
सलिला, लीला सहित; ताहिमे एक
कमला—(कमलारूप !) बहथि बिच देश,
होइछ जनिक कृपासँ कृषक समाज
सतत शालि-सम्पन्न; किन्तु अति ह्रास
ज्वर-जर्ज्जर अधिकांश, बारहो मास
क्षीण, नष्टप्रभ, बिलपथि धएने सेज;
मनबथि ईश्वरसँ—"हो कहुना मुक्ति
ज्वरारूढ़ कमलासँ,"—छथि जे आज
ऋतु वसन्तमे शुष्क-हृदय; दुहु भाग
शुष्क-क्षेत्र, अरु शुष्क पश्चिमी वायु
लए रज-कण बह, धूसरयुत पाश्चात्य
सान्ध्य-गगन, अरु एक-नेत्र ग्रह शुक्र
करथि निरीक्षण सदय, देथि निज क्षीण
ज्योति-दान अति श्रान्त पथिककेँ शून्य-
सर्पाकार तटिनि-तट-जन-पथ-लीन।
धूमिल आकाशक नीरवता भङ्ग
करइछ कोकिल करुण गानसँ आज
शुष्क आम्र-कङ्कालक शाखा बैसि।
—आगाँ उठइछ धूम अनेको स्थान,

क्षीण-प्रकाशित अछि नीरव किछु गेह,
दिवस-कर्म्मवश क्लान्त कतहु किछु लोक
बैसि सुनथि कत गप्प, कथा, इतिहास,
भावुक वयोवृद्ध जनसँ सस्नेह;
सूनथि अरु तल्लीन रहथि किछु काल,
क्रमहिँ बिसरि शारीरिक श्रान्ति, प्रसन्न
ऊठथि, बितबथि राति, शयनरत, शान्त।
छल ई उन्नत, 'शिवपुर' ग्राम, प्रसिद्ध।
कमला कमला-रूप छली' तेहि काल,
रोगहीन सभ लोक करए उपभोग
सभ तरहक सुख।
ब्राह्मण निज व्रत लीन
छला' एतए गोपालनाथ झा एक
कर्मनिष्ठ अति, माङ्गल ओ कतबेरि
विष्णु, गिरिश, देवीसँ एक सुपुत्र,
पाओल बृद्ध-वयसमे। किन्तु विचित्र
कालक गतिसँ, शिशु-मुख-अस्फुट-शब्द
सुनि नहि सकला,' कएलन्हि विप्र प्रयाण
सुरपुर-पथपर, छोड़ि एतए अति दीन
अबला नारि-सनेह-शरण शिशु पुत्र।

बीतल दिन, रजनी, क्रमशः कत मास।
स्वामि-निधन-अनलक ज्वाला किछु शान्त
हो' प्रतिदिन क्रमशः अबला जेहि काल
मातृत्वक सुख भोग करथि भरि कोर
कोमल शिशु, शीतल-प्रलेप अनुभूति
तप्त गात्रपर, हिय बिच हो' आनन्द
देखि समीपहिँ सुत-मुख-कमल-प्रफुल्ल;
शोक-तिमिर-आच्छादित मन-आकाश
हो' शोभित शिशु-शशिसम-सुतमुख देखि।
अधबोलिआ सुनि श्रवण करए उपभोग
सुधाधार सम, आकुल सजल नयान
पाबए शान्ति अपार, देखि सुकुमार।
× × ×
गौर वर्ण सुन्दर बालक शिवनाथ,
जनक-हीन, जननीक कोरमे सौख्य
पाओल सभ विधि, भेल न वस्तु अभाव
साधारण-परिवारक बालक हेतु।
बीतल शैशव, पठनशील शिवनाथ,
सहपाठी-सङ्ग क्रमहिँ समुन्नत भेल
विद्या, रूप, वयस मे।
काशी-मध्य

कएल व्यतीत अयन कत, शास्त्र-विचार-
-अग्रगण्य, व्रतनिष्ठ, सतत गुरुभक्त,
ब्रह्मचर्य्यव्रत—नियमबद्ध, अति नम्र।
हो' छात्रालय-बिच कत' वाद-विवाद,
तखन मित्रबिच कखनहु अपन विचार
अविवाहित जीवन रखबाक, प्रकाश
करथि,—

"समाजक उन्नति करब अवश्य,
उत्तम रूपें अविवाहित रहि मित्र !
निश्चय जानिअ, अछि लौकिक व्यवहार
अतिशय भ्रमयुत,......"

आदि कहथि कतबेरि !

यदि युव-बिच किछु स्वाभाविक हो गल्प
सरस, भावमय, लक्ष्यपूर्ण, अरु व्यक्त,
सम्मुख पथपर सुन्दरि युवति विलोकि,
हृत्तंत्री झंकृत भए, मृदुल तरङ्ग
सरस हृदय बिच उठि पुनि होअ विलीन
क्षण भरिमे अज्ञात !—

किन्तु ई बात
स्मरण करथि यदि, हो हिनका सन्ताप

अमत चरित्र बलक ऊपर दए दोष,
मत विरक्त भए ऊठि त्वरित चल जाथि,
मित्र सभहिकें धिक्कारथि कत बेरि।

ग्रीष्म समय काशी तजि मैथिल छात्र,
अबइत छथि निज 'देश' वर्ष उपरान्त।
सरस रसाल सभक उपवन बिच भोग्य,
आषाढ़क वृष्टिक सुख अनुभव सङ्ग
हो' सौराठ-सभा युव-सौख्य-निमित्त !

एहि जग बिच मानव दुख सहि कत बेरि
निस्सहाय, निरुपाय, अतीव उदास,
भए निराश हत-भाग्य तथापि प्रयास
करइछ जीवन-पथपर चलक निमित्त
पुनि आशा बल पर ! नहि निश्चय जानि
फल रहस्य-प्रच्छन्न भविष्य अधीन।

एकमात्र पुत्रक वैवाहिक सौख्य
देखक हेतु रहल विधवा केरि प्राण—।
प्रति वत्सर सुत-सम्मुख कहल सयत्न
अपन मनोरथ पूर्ण अश्रुयुत नेत्र !
"विद्योपार्ज्जन-बाधक होएत विवाह

अल्पवयसमे एखन....'' आओर किछु बात
कहि कहि टारथि 'शिव' जननिक अनुरोध ।

बीस चैत्र बीतल 'शिव' जन्मक बाद;
ग्रीष्म समय आएल, आएल सब छात्र,
अएला' 'शिव' शास्त्र-स्नातक, एहि साल।
वैवाहिक जीवनक समस्या. फेरि
आएल सम्मुख; कठिन प्रश्न छल किन्तु !
मातृ-नयन-जल कएलक आद्र अतीव
दृढ़ प्रतिज्ञ पण्डित-वर हृदय विशाल।
अपन सौख्य-साधन, जग-विभवसमस्त
केन्द्रीभूत तनयमे देखि, सयत्न,
जे जननी, दए जन्म, पोसि जग-बीच,
रोम रोममे देल अपन प्रतिबिम्ब
तनिक स्नेह बन्धनसँ भेल न मुक्ति;—
क्षण भरिमे देखल, 'शिव' सकल समाज,
विद्योपार्ज्जित ज्ञान अपन, सभ सृष्टि,
मातृ-अश्रु-कण-जलनिधि भासल जाए !

भेल विवाह, क्रमहिँ बीतल नओ मास।

आएल ऋतुपति नव-किसलय-परिधान;
नव कुसुमक आभूषण सजि छथि देवि
आइलि प्रकृति-बधू; आइलि छथि आज
बहुआसिनि 'सरला', गृह-लक्ष्मीरूप ।
सुन्दर वेश, मनोहर परम स्वभाव,
जनिकर गुण-गण-गणना कए शिवनाथ
गद्गद होथि सरस हिअ सुहृद-समीप ।

× × ×

मधु राका अछि आज । चन्द्रिका-स्नात-
निशा, रत्नयुत नीलवसन-तन, शान्त,
रतिपति-विजय-प्रयाण-समय अछि ठाढ़ि
सुधापूण शुभ रजत-कलश सिर धारि ।
आम्र-मञ्जरी करए दान मकरन्द,
जूही रजनीगन्धासङ्ग आमोद
दए, प्रियतम वायुक प्रति अपन सनेह
करइछ प्रकट; केलि-वश शिथिल समीर,
मन्द-मन्द गति जाए असीम प्रदेश ।
अलस नयन शिवनाथ, कएल उपभोग
अमृत रसक, सुनि सुमधुर कोकिल गान;
आएल शीतल मृदु मलयानिल वेग,

नेत्र पलक किछु उन्मीलित भए गेल;
देखल—वातायन-पथ-अबइत शुभ्र
ज्योत्स्नाधार-निमज्जित सरला रूप :—
हिलइत मुक्त अलकयुत शुभ्र कपोल,
भाग्यपूण सिन्दूर-विन्दुयुत भाल;
अलस निमीलित नेत्र, तथा अधरोष्ठ
सस्मित, कम्पित कखनहुँ, कखनहुँ शान्त।
कणफूल श्रुति - मूल - लग्न, अति शुभ्र
वङ्किम ग्रीवा, सुरभित-सुमन-सुमाल-
शोभित अर्द्ध तिरोहित वक्ष प्रदेश !........

करइत सरला-रूप-सुधारस पान
सोचल 'शिव', नैसर्गिक सुख आधार
अछि दाम्पत्य प्रणय,
अविवाहित व्यक्ति—
अप्रस्फुटित - प्रसून, बद्ध गिरि - नीर,
बिधिक अर्द्ध रचना, जग सौख्य विहीन,
कहइछ—अछि संसार महा निस्सार !

नूतन दम्पति यौवन-प्रणय-विभोर
बितबथि काल त्वरित;—सुखरस संश्लिष्ट

मधु बीतल; आएल माधव, अति शुष्क
पश्चिम वायु प्रबल युत कठित निदाघ,
ऋतु बरसात सरस अति, गृह-पति लीन
कृषि-कर्म्महि, अरु शरद समय आनन्द
देवी पूजा रत सभ जन, हेमन्त,
शिशिर-शीत-संकुचित दिवस, अति शीघ्र
बीतल-पुनि आएल ऋतुराज वसन्त !

समयक सरिता बिच भसिआइलि जाए
यौवन - तरिणी, किन्तु अचानक एक
घूर्णचक्र बिच पड़ल आज, असहाय,
देखल 'शिव', परिवारक सुख-निधि मूल
मातृ - स्नेह-छायाक क्रमहिँ अवसान !
जननी-जनक रहित सरला, सभ सौख्य
पाओल एतए स्वसुर कुल रहि; अनुराग-
भरलि सासु, करुणा स्नेहक आगार,
छलथिन्ह जननि समान सदय सभकाल।
सम्प्रति एकाकिनि, गृह कर्महिँ लीन
कुलरक्षक - सन्तति - बीजक शुभ - भार
करइत बहन, कएल किछु दिवस व्यतीत।

व्यथित हृदय, जाइत छथि सरला आज
नैहर। नोर भरल नयनहिँ कए बेरि
दुहु कर जोड़ि, देवि काँ कएल प्रणाम।
स्वामि-निकट अबितहिँ अविरल जलधार
नयन विनिर्गत प्लावित कएल समग्र
चिबुक, कपोल, न सकल देखि भरि आँखि
स्वामि-कमल-मुख; कहइत किछु अस्पष्ट
मन्दस्वरसँ, चरण कएल संस्पर्श
कम्पित करहिँ, फेरि देवी दिशि देखि
कए प्रणाम, बहराइलि—सम्मुख आबि,
श्रेष्ठ व्यक्तिसँ आशिष, अरु सस्नेह
आश्वासन प्रिय सखिगणसँ, अव्यक्त
सरल प्रेम शिशु-शशि मुखसँ, लए क्लान्त,
अस्थिर चित्त, क्रमहिँ चढ़ि बैसलि जाए
पालकीक बिच, अश्रुवेगकेँ रोकि।

× × ×

जननि-स्नेह-रस सिक्त शान्त शिवनाथ,
वयस बिताओल सतत सुखहिँ निश्चिन्त।
जखन विवाहित, परिवारक किछु भार
आएल सम्मुख, किन्तु एतए छल सङ्ग

गृह-जीवनक मधुर यौवन रस प्रीति।
यदि कखनहु हो' चिन्तित, किञ्चित म्लान
मुख मण्डल, अति शीघ्र प्रफुल्लित होअ
पाबि प्रियाक सरस कोमल मुसुकान,
नीरव प्रश्नोत्सुक नयनहिँ अवलोकि।
आज जननि नहि, नहि सरला एहि
ठाम आङन शून्य !

शून्यमन बैसल जाए
मण्डप पर 'शिव', सुखमय स्मृति सुस्पस्ट
मानस पटपर आबए अरु चल जाए
चलित-चित्र सम क्रम क्रमशः, कत काल
बीतल एहि विधि, नीरव अरु अज्ञात
व्यथित-हृदय अति द्रवित, प्रबल उच्छ्वास
उठल कखन, कखन ओ अन्तर्वाष्प
निश्चल लोचन पथसँ दुइ जल विन्दु
भए बहराएल, भेल शुष्क पुनि वाष्प !
स्वप्नोत्थित सम उठि देखल—आश्चर्य
सायंकाल ! चलल लए निज जलपात्र
तटिनी-तट सन्ध्यादिक करक निमित्त।

राति भरिक छल बात, प्रभातहिँ काल्हि,
निश्चित शुभ-यात्राक समय, शिवनाथ
जएता' काशी चारि वर्ष उपरान्त ।

× × ×

मातृ-रहित नैहर ! तथापि जेहिठाम
जन्म भेल, अरु बीतल तेरह वर्ष,
सएह भाए-भाउजि-गृह पैत्रिक-वंश ।
जननिक स्नेह भरल अन्तिम सन्तान,
सातम वर्षक वयस तखन—जेहिकाल
मरण-सेज पर पड़लि, आँखि भरि नोर,
वृद्धा करुणा-आकुल हाथ पसारि
बालिकाक कोमल शिर निज उर राखि,
कम्पित करसँ पोछथि पसरल केश
देखथि नीरव नयनहिँ तनया रूप !

सम्प्रति दश वत्सरक दीर्घ व्यवधान ।
दुइ भाइक ई एकसरि बहिनि, समस्त
परिवारक शुभ स्नेह, प्रेम, अनुराग,
हास्यविनोद सहित भौजीक दुलार,
सतत यत्नबिच बीतल वर्षक वर्ष ।

आइ बैसि सोचथि सरला गत काल—
शैशव——"गङ्गाजली,' 'सिनेह'क सङ्ग
उठि अन्हरोखहिँ माघक 'परतसनान';
बैसाखहिँ आमक टिकुला बिछनाइ;
भालसरी-फूलक माला; कत खेड़ि—
गोटरस, सतघारा, तिनकट्टी तास;
सीकिक पौती बूनब, रङ्ग विरङ्ग,
दशमीमे डाली भरि भरि कए फूल—
सिङरहार, मधुरी, तीरा, ओढ़ूल............
....कए दिन झगड़ा, झंझट, रूसब, मेल,
—भौजिक आगू पञ्चैती कए बेरि........ ।
छी हम कतए ? कतए छथि आइ 'सिनेह'
'गङ्गाजली' कतए ? आनन्द उछाह
बुझि पड़ैछ ओ सभ किछु स्वप्न समान !..."

सुखमय मधुर स्वप्न निश्चय; अज्ञान,
संसारक मयासँ मुक्त, अबोध
शैशव काल, तुषार विनिर्गत वारि
स्वच्छ, मलिन - मेदिनी-पङ्क - अस्पृष्ट ।
नहि आकर्षण, दुखद वियोग विशेष ।
लेश मात्र नहि हिंसा अरु विद्वेष ।

किन्तु क्रमहिँ वयसक सङ्ग ज्ञान, विचार,
हो अंकुरित विविध विधि माया, मोह,
क्रोध, लोभ, मद-बीज बढ़ए, पश्चात
ज्ञानक तमसँ हो विज्ञानक अन्त !

× × ×

चारि वर्ष उपरान्त, आइ शिवनाथ
चिर परिचित प्राचीन वास-थल आबि
पाओल सभ किछु परिवर्तित सभठाम !
—नूतन लोक, गल्प नव, नव व्यवहार,
सभ नवीन !
गङ्गाक विमल जल-धार
घाट घाट पर धर्मेच्छुक नर-नारि
मज्जित, मन्दिराभिमुख, जाए असंख्य;
सएह राजपथ, बीथि, उच्च प्रासाद,
परिचित निश्चय, किन्तु अपरिचित भान
होइछ विगत-समय-आवरणक हेतु !

अछि की अपनहि बिच परिवर्त्तन भेल ?
नहि ओ समय-बद्ध दैनिक सभ कार्य्य—
प्रत्यूषहिँ ऊठब, योगासन, स्नान,
सन्ध्या, जप आदिक, पाठक आवृत्ति,

भोजन, गुरुक निवास जाए लए पाठ
नित नवीन, अरु शास्त्रक तक वितर्क;
प्रति दिन मानस क्षितिजक होअ विकाश
पाबि ज्ञान-रवि-क्रमहिँ-प्रखर-आलोक ।

किन्तु आज ! ई विगत काल ! की ज्ञान
पाओल हम एहि चारि वष रहि गाम ?
"मूर्ख बनक यदि इच्छा अछि, रहु गाम····"
—अक्षरशः ई सत्य । गाम रहि लोक
सीखत केवल क्रोध, राग, विद्वेष
मत्सरता; आनक उन्नतिकेँ देखि,
ईर्ष्यानलसँदग्ध, विगत-सन्तोष,
आर्थिक सङ्कट-पंगु, संकुचित दृष्टि—
दूषित ग्राम्य-समाज, सकल ग्रामीण !

चरि वष बीतल एहि विधि निष्कर्म्म !
निष्कर्मा भए ग्राम बैसि की कएल ?
गृह-परिवारक सुख अनुभव ? आनन्द ?
सुख आनन्द क्षणिक ई,····किन्तु समस्त-
संसारक सभ जन अछि एहि मे लिप्त ।

लिप्त सभहिँ, अज्ञान तिमिर-आच्छन्न
जन-संसद पशु सम आचरण करैछ।
—इएह विचार छल पूर्व्व हमर ?

कत शास्त्र
पढ़क हेतु इच्छा छल, उन्नत दृष्टि,
पूर्ण ज्ञान अर्ज्जन कए जाएब देश,
देशक हम उपकार करब सभ भाँति····।
किन्तु एखन ?········

जे भेल, भेल से भेल;
दृढ़-प्रतिज्ञ हम आब ओएह शिवनाथ।
दर्शन शास्त्राध्ययन प्रथम, पश्चात
चारू वेद समस्त षड़ङ्ग समेत,··········
लिखब ग्रन्थ कत क्लिष्ट विषय पर भाष्य, २९
महामहोपाध्याय, — मैथिलक मान
राखब वाचस्पति शङ्कर सम फेरि।
ई थिक हमर लक्ष्य, हम सभ विधि पूर्ण
करब अपन उद्देश्य, तखन निज ग्राम
जाएब सम्मानित भए, अरु ओहि काल
सरला—····················

सजल नयन, किअ व्याकुल चित्त

आकुल हृदय, प्रिये, किअ एहन विषाद ?
अछि अहकेँ नहि हमरा प्रति विश्वास ?
अहँ सन नारी-रत्न पाबि सभ सौख्य
पाओल हम, अवनी-सुख-निधि एकत्र ! ३०
शारीरिक सुख अनुभवसँ नहि होअ
ज्ञान-पिपासु हमर अन्तस्तल तृप्त।
ज्ञानेच्छुक हम, नहि रहि सकब प्रसन्न
आत्म-तृप्ति नहि होएत मम एहि भाँति।
······अर्द्धाङ्गिनी हमर अहँ, हमर विचार
ज्ञान, मान, उन्नति, सभहिक अर्द्धांश
अछि अहाँक, होएत पुनि देवि ! अहाँक।
किछु दिन, किछु वत्सर धरि, सहु किछु कष्ट
शारीरिक, मानसिक मानसिक कष्ट
होएत किएक अहाँके ?

भारत-नारि, ३१
श्रेष्ठ विमल ब्राह्मणक वंश दुहु पक्ष,
स्वसुरपितागृह, पण्डित जनक अहाँक।
भारत-कुल-रमणीक सतत अछि धम्म
स्वामिक अभ्युन्नतिक प्रार्थनामात्र।
सरले ! धरु अहँ धीर, करिअ सुख भोग

कोमल शिशु-मुख देखि, देखि सस्नेह
चुम्बन-अङ्कित-वदन-सन्ततिक, — पुत्र—!
...निश्चय बालक,—सुन्दर, काञ्चन गौर
माइक वर्णसन, दीर्घ विशाल कपार,
होएत चञ्चल, तेज, अनूपम बुद्धि;
जननि-स्नेह-रस-सिंचित बढ़त,—विद्वान
होएत अद्वितीय, पण्डित मम पुत्र।
....कन्या— यदि बालिका ! ओकर कमनीय
कोमल कुसुम कान्ति, अनुपम लावण्य
श्यामल कुञ्चित केश, समायत नेत्र
किंसुक सम नासिका, तथा अधरोष्ठ
मधुरि सुमन सन, कत सुन्दरि सुकुमारि
होएत ! किन्तु विशिष्ट बुद्धि गुण युक्त,
नाम — शारदा; —सरस्वतीक समान
अपर भारती, होएत तनया मोर,
मिथिला, मैथिल नारी वृन्दक मान
राखति, मम कुल गौरव बढ़त अशेष।

× × ×

पूर्ण युवति, गृहिणी सरला, कृश गात्र,
जननिक पद पाओल; पाओल सुकुमार

कोमल शिशु तनुजात, 'हुनक' प्रतिबिम्ब !
नव नवनीत समान, बालकक अङ्ग
लए आह्लादित सरला गद्गद होथि—
—"भरल माथ कारी रेशम सन केश,
पँघ कपार विशेष भाग केरि चिह्न।
कोसासन दुहु आँखि, बाउ केरि नाक
ठाढ़ जेहन छूरी सन, पानक पात
सन अछि पातर ओठ लाल तिलकोड़।—
सुन्नर गोल चन्द्रमा सन अछि मूह,
कमलक सन दुहु हाथ, तूर सन देह—।
गोर केहन अछि! नहि केओ अछि एहि गाम
नहि 'ओहि' गामहिँ—अछि एकरा सन गोर।
हमरा सन सुन्नरि के अछि एहि ठाम ?
'हुनकर' मुहक काट सन ककरो छैक ?
होएत किए नहि एहन हमर सन्तान ?
जे देखत, जे देखै' अछि भारि आँखि
देखितहिँ रहि जाइछ........

जनिकर अधलाह
नजरि, मोन छन्हि दुष्ट, भरलि छथि डाह,
राखथु मलिन बुद्धि ओ अपनहि सङ्ग

अपने लोक वेद लें' लेथु सम्हारि।
हमर सोन सन नेन्नाकें केओ देखि
जरत किए ?........
हे भगवति, अहिंक भरोस
रहू सदय, राखू मोर कोखिक लाज।
बाउक नामसँ आँचर बान्हब, देवि !
मूड़नमे जोड़ा छागर, उपनयन
करब कतेक मनोरथसँ। भगवान !
बाउ प्रसन्न रहए सभ दिन, ई वंश
बढ़ए क्रमहिं एतबहिमे हमर सोहाग।........"
सोचथि सरला एहि विधि, कत खन बैसि,
क्रीड़ा-रत शिशु देखथि, विहुँसथि देखि—
तामक मट्ठा-भरल हाथकें फेंकि,
फेंकि पकड़ि पाएरक अंङुठाकें मोड़ि
राखथि मुहमे; कारी ऐंठा देखि
निश्चल दृष्टि रहथि किछु क्षण, (हो भान
यथा हुनक पुत्तलिका अछि प्रतिबिम्ब
भमरा सन कारी ऐंठाक स्वरूप !)
पुनि ताकथि दोसर दिशि, होथि प्रफुल्ल
सुमन-कली सम अनुपम दन्त-विहीन

कोमल अरुण अधरयुत ओ मृदुहास !
शशि सम सुत मुख देखि हृदय सरलाक
उद्वेलित, उल्लसित होअ, जिमि सिन्धु।
दुहुकरसँ सरिआ कए लेथि उठाए,
हृदय लगाबथि, अरु उर बाहुक बीच
कोष बनाए, राखि किछु क्षण शिशु रत्न,
पुनि ऊपर उठबथि, मुह, गाल, कपार
हाथ आदि चुम्बन अङ्कित कए देथि।
अपन स्नेह-चुम्बित प्रसन्न मृदु हास-
भरल छोट सुत-मुह लगबथि निज ठोर,
हुनक गाल लए गाल लगाबथि, शान्ति
पाबथि थोड़, अशान्तिहिँ हृदय विशेष
होइन्हि प्रबल आनन्द तरङ्गक सङ्ग।
....भाए, भाउजिकें देखथि यदि किछु दूर
बेश लजाइलि, ऊठथि मूड़ी गाड़ि,
छोड़ि तनयकें ततहि, शीघ्र चल जाथि;
लए चल जाथि शरीर, किन्तु मन, चित्त,
रहन्हि ओतए, देखथि घुरि घुरि कए बेरि
आकुल नयनहिं! छोटि भतीजिक हाथ
पकड़ि, बुझाए, पठाबथि शिशुक समीप।

सुन्दर स्वस्थ शिशुक क्रमशः सभ अङ्ग
बढ़इत छल शुक्लक शशि-कला समान—
ससरब, बैसब, घुसकब·········काल व्यतीत
भेल, क्रमहिँ अन्न-प्रासन-संस्कार।
कमल कोष बिच बेलिक कली समान
शोभित नव उपगत सुन्दर दुइ दाँत,
जे पाबथि लए मुह लगबथि,
ओंघड़ाथि
कानथि अब्रोढकार, आँखि भरि नोर, ४०
यदि केओ कहन्हि, करन्हि किछु मन प्रतिकूल।
थाहाथाही देथि डेग पर डेग
दैत बढ़थि अरु खसथि, चलथि सत काल।
कए दिन साँझ पड़ैत रहथि ओ सूति,
कए दिन चेष्टा कएनहुँ नहि हो निन्द,
सन्ध्या समय माम केरि कोरा आवि
पाबथि स्नेह, मधुर चुम्बन, कत प्रश्न-
उत्तर, आग्रह प्रेम भरल परिबोध—
"आ चन्ना, आ चन्ना"·········आदिक बात
कहि कहि, 'अटकन मटकन' खेल खेलाए। ४१
क्रमहिँ मधुर अस्पष्ट शिशुक प्रिय बोल

"छाते भवतु·········"आदि श्लोकक आवृत्ति
सुनि कए गद्‌गद होथि सभहिँ, अति हृष्ट।

× × ×

एहि विधि बीतल दिवस मास अरु वर्ष
बीति गेल दुइ वर्ष, किन्तु शिवनाथ
अएला' नहि निज गाम !

अध्ययन-शील

छात्र जीवनक सकल नियन्त्रण राखि
दर्शन-गहन-मध्य ओ कएल प्रवेश।
'शास्त्र-पठनसँ ज्ञानक होअ विकाश'—
कहइछ निश्चय लोक; शास्त्र पढ़ि छात्र
साधारण अज्ञान आवरण मुक्त
देखए गूढ़ कठिनतर विषय समक्ष।
एक बेरि ओ ज्ञान रसक आस्वाद
पाबि, अतृप्त-हृदय, जिज्ञासु-प्रवृत्त
होअ' क्रमहिँ विज्ञान हेतु गति शील।
शास्त्र - सोमरस - मादक विह्वल बुद्धि,
ज्ञान-पिपासा क्रमशः बढ़ितहिँ गेल।
न्याय, सांख्य, वेदान्त आदि केरि ग्रन्थ,
पढ़ल अनेको भाष्य, नव्य प्राचीन;

अस्ति-नास्ति बिच्च मनःक्षत्रमे युद्ध
प्रकृति पुरुष बिच भेद, भक्ति अरु कर्म्म,
द्वैत तथा अद्वैत, ज्ञान विज्ञान,
विद्या आओर अविद्या लए संघर्ष !
नहि हो चित्त निरोध, न मनमे शान्ति,
आत्म-तृप्ति नहि,········तखन ?
नियन्त्रण हेतु
योग-नियोगक मार्ग मात्र अवलम्ब !
सोचल 'शिव'—"उन्नतिक एक आधार
योगाभ्यास, तपस्या, रहि एकान्त।
मानव तन, ब्राह्मणक वंश लए जन्म
भोग, रोग बिच जीवन करब समाप्त !

ब्रह्म-तेज अरु योग-तपोबल प्राप्त
ज्ञान-शक्तिसँ दैहिक उन्नति - सङ्ग
हो कैवल्य-प्राप्ति मुक्ति, निर्वाण !········
········ई कलरव !

जन-कोलाहलसँ मुक्त
शान्त आओर एकान्त हिमालय प्रान्त
करब बास, अभ्यास, तपस्या, योग।
होएत चित्त निरोध, मानसिक शान्ति

पाएब ज्ञान-तत्व अरु आत्म विकाश।—
योगी हम, संन्यासी, हम संन्यस्त।
································

········गृहस्थाश्रमक मध्य काल संन्यास !
····एहि वयसक, आश्रमक बहुत किछु कर्म्म
कएलहुं सम्पादन हम; कएल विवाह,
चारि वर्ष रहि गाम समाजक सङ्ग
सुख-दुख अनुभव,—तखन एक मम पुत्र,
वंश-सूत्र-रक्षक अछि, पितरक कर्म्म
करत, पिण्ड-जल-दान ···कहैं' अछि लोक—
अछि ओ सुन्दर बालक, चञ्चल, तेज,
पैघ आँखि, तनु गौर, विशाल कपार।
····देखल नहि शिशु-मुख, नहि अस्फुट शब्द
सुधा-बिन्दु सम पड़ल श्रवण बिच, स्नेह
आलिङ्गनसँ शीतल भेल न गात।
····रहओ जतए अछि कुशल, सुखी, दीर्घायु,
माइक स्नेहसङ हमर शुभाशीर्वाद
इएह;—कुलोचित मर्य्यादा, व्यवहार
राखओ, पढ़ि विद्वान-प्राप्त - सम्मान।
························

सरला ! अहँक मूर्ति एखनहुँ अछि स्पष्ट
स्मृति पट पर अङ्कित; कालक व्यवधान,
कए नहि सकल एखन धरि एकरा म्लान।
........कोमल हृदय रमणि ! अहँ सङ सुख-भोग,
माया मोह लिप्त भए नहि हम आब
रहि सकइत छी गृही, समाजक सङ्ग।
अहँ गृह-देवी, कुल-रमणी, रहि गेह,
सन्तति-पालन अरु निज धम्महिँ लीन
करिअ काल-यापन,
नारिक सम्मान
सर्व्व श्रेष्ठ अछि जग बिच, जननी रूप।
करिअ क्षमा,
अरु क्रमशः बिसरिअ मोहि।
अहँक विरह-करुणाक सूक्ष्मतम अंश
करए न मम मानस-पटपर आघात,
मम-अन्तस्तल उद्वेलित जनु होअ,
हो नहि विघटित मम साधना विधान।
.... ईश्वर अहँके धैर्य्य देथु, अरु शान्ति,
जीवन कर्म्म मार्ग पर चलक निमित्त।

इएह हमर कामना, शुभाशीर्वाद।
....
जय शिव ! हो मम योग-साधनापूर्ण !!

× × ×

जन अरण्यस दूर, हिमालय प्रान्त,
शान्त तथा एकान्त निर्ज्जनावास,
पर्णकुटी अछि एक, तुच्छ, सुपवित्र।
दक्षिण दिशि निकटहिँ वट विटप विशाल
आगाँ-निम्न भूमि, प्रस्तर मय घाट
प्रकृति-विनिर्म्मित, भागीरथि जलधार
बाल्य-प्रखर-चाञ्चल्य युक्त, गति वक्र,
प्रतनु शलिल, अरु निर्म्मल मृदुल तरङ्ग
कूलस्थित उपलक सङ करइत खेल,
श्रुति सुख कल-कलरव मुखरित चल जाए।
उत्तर-प्राची दिशि पर्व्वतक उतार
ऊपर उठइत, साधारण वनवृक्ष—
शाल, कदम्ब, पलास, सिरीस, रसाल।
क्रमहिँ सघन, अति निबिड़ निकुञ्ज-अरण्य
पादपराज, समुन्नत दीर्घ-विशाल
देवदारु, शुचि, रक्त भूर्ज, अरु चीर;

श्यामल - गिरिवर शिखर-असंख्य तरङ्ग
श्याम सुनील गगन बिच होअ विलीन।
बहुत दूर हिम धवल अनेको शृङ्ग
अछि शोभित, जिमि परिषद सह नग-राज
रत्न जटित अति शुभ्र मुकुट शिर धारि
उन्नत-सिंहासनासीन, साम्राज्य
देखथि चतुर्द्दिक्षु विस्तृत निस्सीम।
पश्चिम—विस्तृत उपत्यका, लघु वृक्ष
वन निकुञ्ज फल-फूल भरल, अति रम्य।
क्रमहिं निम्नतर भूमि—एक अति क्षीण
गिरि निस्सृत जल-स्रोत, आओर किछु दूर
आगाँ—क्षितिज समीप, क्षुद्र एक ग्राम,
पर्व्वत जातिक लोकक पल्लि-समाज।

× × ×

सन्तत कर्म्म-निरत रवि, अतिशय क्लान्त
जाए कएल विश्राम प्रतीचिक अङ्क।
सन्ध्या, पाण्डुर, क्लान्त, नील पट तानि
कएल प्रयाण त्वरित गति, अलस नयान।
मलिन क्षीण आलोक, गगन बिच श्रान्त
नीरव विहग नीड़-मुख; अवनिक अङ्क

दीर्घ श्याम नगराज शान्त, वन वृक्ष,
लघु निकुञ्ज, समुन्नत विटप विशाल
निश्चल, मौन;
क्षुब्ध नीरव पवमान
चलइछ मन्द मन्द गति; तारक वृन्द,
सीमित-पथ-गति-शील, समय-आबद्ध
देखए शान्ति-क्षमा-मयि धरिणिक रूप।
महा विटप छाया तमसावृत स्तब्ध,
क्षीण प्रकाशित जाग्रत तुच्छ कुटीर,
जाग्रत कर्म्म-निरत योगी शिवनाथ,
जाग्रत जखन जगत अछि शान्त, सुषुप्त !
पद्मासन-आबद्ध, कुशासन बैसि
स्तिमित नयन, अति शुद्धचित्त अरु मौन,
पूरक-कुम्भक-रेचक-गति विधि पूर्ण,
नियमित प्राणायाम, श्वास, प्रश्वास
चलइछ पूर्ण नियन्त्रित यन्त्र समान।
मन-उच्चारित प्रणव-मन्त्र-टङ्कार
करइछ जाग्रत कुण्डलिनीक प्रसुप्त
अवनत मुख, अरु होअ अनाहत-नाद
स्पष्ट श्रुति-श्रुत,—क्षीण कलेवर देह

विद्युत-शक्ति-तरङ्गायित भए आँए।
स्थिर निष्कम्प समाहित वाह्य शरीर,
अन्तर्भीषण-कर्म्म-निरत, — एहि भाँति
होअए दीर्घ विभावरीक अवसान।

शयन त्यागि कोमल रवि शिशु सुकुमार,
रञ्जित-पट-आवरण हटाए, प्रसन्न,
प्राची - प्राङ्गण - रङ्ग - मञ्चपर आबि
प्रमुदित कएल जगत दए ज्योति ललाम।
तरुण - अरुण - आलोक - राग - अनुरक्त
अमल-धवल-गिरिश्रेणि, मनोरम कान्ति
आभा, करइछ प्रगट; सकल वन प्रान्त
श्याम हरित तरु-पुञ्ज, लताक वितान,
त्यागल नैश तिमिर-मादक-आलस्य
नूतन ज्योति-मयूख-सुधारस पीबि।

नव जीवन, प्रस्फुटित सुमन, सभ कुञ्ज
गुञ्जित मधुप-निकर, कूजित खगवृन्द
मुक्त नील-नभ, तुहिन बिन्दुकण सिक्त
शाद्वल शीत अवनि अञ्चल, मृदु मन्द
सुरभित मलय समीर, तालस्वर युक्त

तरल ऊर्म्मि-नर्त्तन, जल-कलकल गान।
साधन पथ पर क्रमहिं अग्रगतिशील
कर्म्मफलक सन्तोष, आत्म-विश्वास
हृदय राखि, ऊठथि 'शिव'; प्रातः कृत्य,
स्नानादिक वैदिक साधारण कर्म्म
सम्पादन कए, फल जल लए आहार,
उदर-तृप्ति कए, शुद्ध चित्त, मन शान्त,
वट-छाया तर जाए करथि विश्राम,
निद्रारत एहि काल, जखन संसार
जाग्रत, हलचल, कर्म्म-निरत, अछि व्यस्त।
गगन क्रान्ति-मण्डल पर चलइत भानु—
रम्य प्रात, मध्याह्न प्रखर, दिन शेष,
शक्ति-हीन, श्लथ-गमन, तिरोहित होथि।
आबए पुनि नीरव रजनी;—

शुचि रम्य
शरदाकाश—सुनील अनादि विराट-
पुरुष रूप, अछि शोभित शान्त, शयान।
उत्तरीय-पट-सम-छायापथ शुभ्र,
अंगुलीय-हीरक लुब्धक, सुविशाल
वक्षस्थलपर शशि-कौस्तुभ मणि शोभ,

ज्योतिम्मय-नक्षत्र सुमन वनमाल।

शरद समय गत हिम शिशिरक अवसान।
रञ्जित फाल्गुन अबइछ, स्वस्थ समीर
आनए नवल कलेवर, ओजस स्फूर्ति।
अरुणिम-किसलय पात्र भरल मधु पीबि,
वनदेवी सजइत छथि निज शृङ्गार :—
मुख-मण्डल मण्डन भए पुष्प-पराग,
किंसुक लए सीमन्त करथि सिन्दूर,
हरित पत्रचय पट अम्बर, सभ अङ्ग
कुसुम-सुकोमल-भूषण दिव्य अनूप,—
शुष्क-पत्र-मर्म्मर-नूपुर-ध्वनि, मत्त-
अलिदल-गुञ्जन मधुर वीण-झंकार
कीचक-वेणु, सुकोमल पञ्चम तान
कोकिल स्वरसं गइइत मादक गान,
तरल तरङ्गक सङ्ग चरण गति ताल
दैत करथि वन-प्रकृति अलौकिक नृत्य।

करइत नृत्य समय चल जाए अबाध,—
ऋतु कुसुमाकर, आतप, कठिन निदाघ
आबए जाए;

सोहाओन साओन मास
श्यामल लताकुंज, शिखरावलि श्याम,
श्याम मनोहर वारिद-माला पेखि
वन मयूर नाचए, नाचए मन-मोर,
केकारव श्रुति सुखद, नयन अभिराम
रंजित इन्द्र-धनुष, रंजित उत्तुङ्ग
शुभ्र तुषारावृत, असीम गिरि श्रेणि।
छाया आलोकक सङ्ग करइत खेल,
दिवस रम्य बीतए;

अरु कठिन निशीथ
दुस्तर अति, आबए सह झंझावात,
मूसलधार वृष्टि अरु अशनि निपात,
दृष्टि चकितकर विद्युच्चपल प्रकाश,
घुमरि घुमरि घन गर्ज्जन तर्ज्जन रोर,
दादुर-रव, अविरत झिल्ली झनकार,
हा हा नाद, तरङ्ग प्रखर जलधार,
चतुर्दिक्षु भीषण तिमिरावृत घोर,....
काल-रात्रि सम प्रावृट्-रात्रि दुरन्त।

× × ×

एहि विधि ऋतु परिवर्तन, अयनक चक्र

अविरल गतिसँ चलइत जाए नितान्त;
किन्तु रहथि योगी 'शिव' साधन-लीन,
चित सतत अति हृष्ट, हृदय-आकाश
निर्म्मल, शरद शशिक सम स्निग्ध प्रकाश।
देखथि, शान्त भावसँ प्रकृतिक खेल,
देखथि परिवर्तन, परिवर्तन-शील
जगत बीच ई सभ किछु मायारूप !

× × ×

आओर वियोगिनि सरला ! नैहर वास
तीन वर्ष धरि कएल; दिवस अरु मास
गनइत बीतल समय; आश, विश्वास
जे छल मन बिच, क्रमहिं विफल सभ भेल,
सुखक कल्पना-लता गेल मुरुझाए,
मनोरथक सभ साधन गेल बिलाए।
शुष्क रुक्ष गोधूलि समान उदास
सरला, सम्प्रति क्षुब्ध, शान्त, भए मौन
शोचथि गत जीवनक सौख्य, उत्साह,
आनन्दक अनुभव, प्रेमक उद्गार;
देखथि अपन भविष्य, तिमिर आच्छन्न,
लुप्त सकल सौभाग्य, भाग्य-विधि सुप्त,

सुखद काल कर्तव्यक पथ अस्पष्ट।
नैहर बिच ई दीर्घकाल आवास,
लए ई विरह वेदना, ई सन्ताप,—
हो असह्य।
ई अपन पितागृह आब
अछि नहि अपन, न जननि स्नेह आगार।
भाए-भाउजि सभ अपन सुखक दिन; स्नेह
आदर यत्न होअए तखनहि, जेहि काल
भाग्य विधाता रहथि प्रसन्न, सहाय।
किन्तु विपत्तिक छाया पड़इत देखि
सभ किछु हो' विपरीत,—न पहिलुक प्रेम
हृदय-तृप्तिकर वचन, न आदर भाव,
ओतहि, ओही परिवारक बिच ई भेद !
नीरस करुणा, शुष्क सान्त्वना वाक्य,
सखि बिच कर्णाकर्णिगप्प, प्रच्छन्न
प्रसरित लोक रचित कत भिन्न प्रमाद।
कखनहुं व्यङ्ग कटाक्ष, प्रकट कटु बोल
व्यथित हृदयकेँ मथित करए सभ काल।
सहि सभ किछु धरिणी सम, आदर स्नेह,
सकल वेदना, व्यंग आओर आघात,

अइली' 'शिवपुर' सरला नैहर त्यागि
हतोत्साह, अरु भग्न हृदय, असहाय।
एक मात्र आशाक सूत्र शिशु पुत्र
हृदय लगाए 'रमेश' प्रवेसलि गेह-
शून्यगेह, बिक्षिप्त, यथा अभिशप्त।
अपूजिता देबीक पीठ दिशि देखि
मौन करुण वेदना व्यथित हिय, दीन,
तनय सहित नत मस्तक कएल प्रणाम,
नयन विनिर्गत बारिधार दए अर्घ्य।
गृह देविक दुर्दशा देखि, सरलाक
भय-विह्वल मन, हृदय प्रकम्पित भेल;
मुखसँ बहराएल-"उचिते अछि भेल
हमर दशा ई, उचित कठिन अभिशाप।
क्षमा देवि, हे देवि, क्षमा करु मोहि।...."

× × ×

मुण्डनमे देवीक स्थापना आदि
कए अदृश्य शक्तिक प्रति पुनि विश्वास,
भक्ति पुरस्सर पूजा पाठक शङ्ख
दैनिक परिवारक करइत सम काज
बाल तनयके शिक्षा देथि सदैव।

अक्षर-ज्ञान, 'अमरकोश'क अभ्यास,
'पञ्चतन्त्र' केरि कथा, आओर इतिहास,
उपाख्यान कहि, चञ्चल बालक-बुद्धि,
ध्यान करथि आकृष्ट; जखन अति शीघ्र
बालक प्रश्नक उत्तर देथि 'रमेश'
समुचित सरला, लए हुनका निज कोर,
करथि दुलार, सम्हारथि माथक केश
चिबुक पकड़ि देखथि प्रसन्न भरि आँखि,
कोमल विकसित वदन, तखन सस्नेह
चुम्बन अङ्कित करथि कपार, कपोल,
बाजथि-"हमर बाउ अछि बड़ बुधिआर"।

× × ×

कए दिन बाल सुलभ हठ ठाहि रमेश
करथि दुराग्रह कठिन! लाख परिबोध
बाल वचन कखनहु विचित्र गति देखि,
सतत अन्तर्निहित दुःख सन्तप्त
सरला पड़ि क्रोधक आवेशहिँ, जाए
ताड़न करथि अपन तनुजात अबोध
कहथि-'अभागल, कर्म्महीन, हतभाग्य !"

किन्तु—देखि सम्मुख, आतङ्कित म्लान
मुख मण्डल, अरु सूनि करुण चीत्कार,
हृदय लगावथि पुत्र-रत्न, लए कोर,
आँचरसँ मुह नोर पोछि, चल जाथि।
हो शिशु क्रन्दन शान्त, अशान्ति तरङ्ग
ऊठए द्रवित जननि हिय बिच उच्छ्वास,
निश्चल नयन - विनिर्गत - नीरव नीर
अविरल झर झर बहए; अबोध रमेश
स्तब्ध, ठाढ़ भए देखए, जाए समीप
पूछए गरदनि कपड़ि अनेको प्रश्न
आकुल भए, उत्तरमे पावए-मौन
दृढ़भुजबन्धन, आलिङ्गन, अभिषेक।
लए प्रतिदिन निज कर्तव्यक पाथेय
जीवनपथपर चलइत, सरला क्लान्ति
पावथि कखनहुँ, कखनहु क्षीण उदास।
शरद-प्रभात समय एकसरि जेहिकाल
आङनने शेफालिक पसरल फूल
बीछथि,—कए दिन विगत दृश्य सुस्पष्ट
हो अङ्कित मानसपट पर अज्ञात।
— "ओ दिन— जखन जननि सम्मुख शिवनाथ

रोपल एकर तुच्छतरु, अरु पश्चात
दुइ वर्षक उपरान्त, एकर मृदु गन्ध
आबए शयन कक्ष बिच····रम्य निशीथ-
········करथि कके' काव्यक चर्चा, कत श्लोक
पढ़थि, बुझाबथि कतखन रुचि अनुकूल।
········कए दिन बेलिक माला जे हम गाँथि
राखी हुनक निमित्त, देथि पहिराए
हमरहि शपथ पुरस्सर सरस प्रसङ्ग,
मधुर प्रेम आलाप—राति एहि भाँति
बीति जाए अनिमेष,····प्रेम, अनुराग
आग्रह व्यग्र पिपासित-आकुल-दृष्टि।····'
देखइत एहि विधि जाग्रत स्वप्न, विभोर
होथि····किन्तु तत्काल बालिका वृन्द
कलरव करइत आबए हिनक समीप,
बीछए फूल, कहन्हि नव गल्प अनेक,
गाबए मन्द-स्वरसँ कोमल गीत,
गबइत पुनि कलरव करइत चल जाए।
शुभ अवसरपर सरला लोकक सङ्ग
समुल्लसित, आनन्द मग्न भए जाथि;
सखीगणक बिच करथि हास परिहास

हार्दिक सरस विनोद;
अचानक किन्तु
स्मृति छाया आवए अरु करए मलान
विकसित मुखमण्डल, ऊठथि चल जाथि
निज गृह, एकाकिनि भए बैसथि, मौन
सोचथि, शान्त बहाबथि लोचन नीर।
आषाढ़क बरिसात समागम काल
देखथि नवबर-वधू, युवति-कलकण्ठ-
-निस्सृत योग-मलारक रसमय सूर
उपगत करए हृदय बिच विस्मृत बात
—चिर विस्मृत सुख, भोग, अपार बिलास।
एखन राति बरिसात, आँखि भरि नोर,
गाबथि—"सखि हे हमर दुखक नहि ओर"।
पावस सम सरलाक जीवनाकाश
रहए दुखद घन-छायावृत सभकाल,
सुखमय क्षणिक प्रकाश, किन्तु तत्काल
सघन वेदनापूर्ण अश्रु-जल वृष्टि !

× × ×

सात वर्ष रहि योग साधनालीन
संयत सरल चित्त अरु शुद्ध शरीर

'शिव'क हृदय बिच उपगत भेल विचार—
त्यागि नियन्त्रित दैनिक विधि, जप, योग
पावन हिमगिरि-पथ,-पर्य्यटन-निमित्त ।
भारत भूमिक नन्दनवन काश्मीर—
प्रकृतिक क्रीड़ाभूमि, परम कमनीय,
आकर्षक वनकुसुमकुंज अभिराम,
पुष्कर ललित, प्रफुल्लित पुष्कल पद्म,
नील, श्वेत, रक्ताभ नवल शतपत्र;
तट-संलग्न सुसज्जित तरणि अनेक,
तरणि समाश्रित गेह ! निवास स्थान !!
शीतल जल, शीतल वायुक सञ्चार,
जल प्रपात, निर्झर, विगलित हिम धार,
हिममय पथ ऊपर उठइत, गिरि-सानु
सतत तुषारावृत, सर्व्वत्र प्रशान्ति,
ततए—स्फटिक कर्पूर शुभ्र देवेश
'अमरनाथ' शिव-ज्योतिर्लिङ्ग विराज।
अपर अलौकिक शान्ति पाबि शिवनाथ
कएल व्यतीत दिवस कत, पुनि अभियान
स्वर्गारोहण पथ पर :—'बदरीनाथ'
'गङ्गोत्री', 'केदार' आदि कत तीर्थ

जाए कएल शुभ दशन, मज्जन, ध्यान।
कखनहुँ क्लान्त शरीर, करथि विश्राम;
पुनि अदम्य उत्साह, समुत्सुक चित्त
चलथि कठिन दुर्गम पथ,—पथ निस्सीम।
तिब्बत उन्नत अधित्यकाक प्रदेश,
शीत प्रधान, क्षेत्र कृषिकम्म विहीन,
चमरी-लोमश 'याक', अश्व, मृग, मेष,
पशु-पालन-रत लोक, मलिन, अपवित्र।
ततए—ताहि अज्ञात देश पथलीन,
व्यापारिक जन सङ्ग चलइत शिवनाथ
सहइत कष्ट अनेक, अग्रसर होथि,
होथि अग्रसर, दृढ़ मानस सङ्कल्प,
मन प्रसन्न कर 'मानस सर' दिशि लक्ष्य।

समतल पथ, कत निम्न भूमि, भयभीत
वन संकुल गम्भीर गत्त, उत्थान—
उच्च, उच्चतम माल - भूमि, अति रुक्ष।
पर्व्वत पार्श्वस्थित चिक्कन संकीण
जीवन-शंशय-प्रद-पथ, व्यक्ति अनेक
आतङ्कित, अरु पदस्खलित, अति निम्न
क्षिप्र प्रखर धाराक अतल गम्भीर

गर्भंक बिच पल भरि मे होअ विलीन।
कतहु तुषारावृत-पथ, कखनहु शुष्क
श्वास रुद्ध-कर-हिम-झटिका, किछु काल
उपल वृष्टि, पुनि शीतल झंझा, मेघ,
वर्षा;—क्षणहिँ प्रकाश, रौद्र, आलोक।

× × ×

एहि विधि माग दुरन्त अन्त कए आज
देखल शिव, पुलकित तनु, भाव विभोर,
मान सरोवर;—हिमल धवल गिरि सानु
भानु - रश्मि - रंजित - प्राङ्गण बिच दिव्य
स्फटिक पारिदर्शक सुनील जलराशि।
पुण्य भूमि, दुर्गम मानव जग हेतु।
महाकविक कल्पनालोक, ई स्थान
अमर यक्ष गन्धर्व्वंक क्रीड़ा भूमि।
एतए अप्सरा सुर-मन्दाकिनि त्यागि
आबथि, हरित सुकोमल शाद्वल बैसि,
कए उपभोग पवन मन्थर संचार
विगत श्रान्ति शीकर, खोलथि सोल्लास
कटि-किङ्किणि अरु कनक मुखर मंजीर,
मुक्ता-मणिमय हार उतारि, निचोल

मृगमद वासित राखि, करथि संस्पर्श
चम्पक अंगुलिसँ ऊर्म्मिल जल गात्र।
प्रतिबिम्बित उत्फुल्ल रूप सौन्दर्य
देखि, क्षणिक उन्मद, पुनि करथि प्रवेश,—
अवगाहन उच्छ्वालन-जल सखि सङ्ग
स्निग्धोज्ज्वल कलहास, मधुर परिहास।
तखनहि आवेशक वश हृदय लगाए
दुग्धपक्ष शिशु राज-मराल, सयत्न
करतल-पद्म-परश-सुख, मृदु विश तन्तु
दए मुख बिच सस्नेह, सुकोमल दीर्घ
ग्रीबा बाहुलता वेष्टित कए देथि।
नील कमल-कलि लए कवरिक शृङ्गार,
पद्म-रेणु-मण्डित-मुख-मण्डल, भाल
कस्तूरी तिलकावलि, कुंकुम बिन्दु
सजि, निज भूषण वसन पहिरि, उन्मुक्त,
कनक-किरण-हिन्दोलहिँ आस लगाए,
नील गगन बिच क्रमशः होथि विलीन।
जन-लोचन-अदृश्य दृश्य एहि भाँति
होइछ एतए अनेक, विबुध हिय भोग्य।
चक्रबाल गिरि परिवेशित, चहु ओर

विस्तृत शून्य समुन्नत भूमि, असीम,
कम्पनहीन, विजन, निश्चल निस्तब्ध।
आश्चर्य्यान्वित बद्ध दृष्टि, शिवनाथ
देखल— किछु जन, भारतीय सम वेश—
यात्री! धर्म्मक उन्नततम सोपान
प्राप्तिक हेतु समागत, मन्थर, क्लान्त।
शीघ्र जाए 'शिव' परिचय कएल, अगाध
आनन्दक अनुभव सङ वार्तालाप
बढ़ल, क्रमहिँ अन्तरतम मित्र समान।
बङ्गालक यात्री,—एहि बिच दुइ वृद्ध,
स्वस्थ तीनि जन मध्यम वयस प्रवीण,
वृद्धा एक, सबल दुइ भृत्यक सङ्ग
पर्व्वत मार्ग प्रदर्शक जन अछि एक।
सभ्य सुशिक्षित, ब्राह्मण कुल सम्भूत,
सभजन, कहइत अपन अपन अनुभूति
पहुँचल जाए सरोवर तट, स्तुति वाक्य
पढ़इत जल संस्पर्श कएल, पुनि स्नान
सन्ध्या-वन्दन, तर्पण, एतए प्रशस्त।
लए तेकुसातिल, मानस-सलिल समेत
पढ़ल मन्त्र अरु तर्पण कएल समाप्त

तर्पण पितृकुलक हित, जननिक हेतु !
बहुत दिवसपर स्मृतिपटपर अस्पष्ट
आएल जननिक स्नेह,—ग्राम,—निज गेह,—
सरला, अपन कुलक रक्षक सन्तान !
वर्षक वर्ष वितल अछि चौदह वर्ष !
सरला—ओकर परिस्थिति ! कष्ट असाध्य ! !
एकमात्र शिशु पुत्र सहाय-विहीन
निश्चल शून्य दृष्टि बैसल भए मौन,
दीर्घकालसँ नीरस, निर्म्मम, शुष्क
हृदय बीच उपगत होइछ अज्ञात
आशंका, अरु करुण वेदना स्पर्श
करइछ चिर प्रसुप्त कोमल सद्भाव ।—
वृद्धाके पूजासन बैसलि देखि,
निज जननीक स्वरूपक होइछ ध्यान........
मातृ स्नेह···दुर्लभ एहि जीवन हेतु ।

× × ×

....

कत वर्षक पश्चात अचानक आज
अन्तस्तल अछि भेल प्रकम्पित, शान्त
साधन-संयत चित्तहु बिच उद्वेग ।

....

········पुनि क्रमशः ई नूतन जाग्रत भाव
अपसृत भेल;······यात्रिगण सङ्ग विहार
गल्प, भोजनक आयोजन, आराम
करइत सभ प्रत्यावर्तन पथ-लग्न-
रात्रि दिवस प्रतिक्षण सहइत कत कष्ट
बढ़इछ क्रमहि ग्राम, निज गृह दिशि क्लान्त ।
यात्रिक बिच शिवनाथ चलथि, अज्ञात
माया - सूत्र - समाकर्षित, मन, चित्त
होइछ पुनि उद्वेलित, क्रमहि अशान्त ।····
····निस्सहाय, अबला 'सरला' कोन भाँति
कोमल शिशु लए सहलक कष्ट नितान्त,
दीघ अवधि,—ई चौदह वर्षक काल
एकाकिनि केहि विधि ई कएल व्यतीत ?
····रोग, बुभुक्षा आकुल, पीड़ित !····मृत्यु ! !
शिवशिव ! हे भगवान ! हमर ई दोष
उत्तरदायी हम, निश्चय एहि जन्य !
गृह-क्षेत्रसँ विमुख, कएल कत कार्य्य,
पढ़ल कतेको शास्त्र, स्वतन्त्र विचार
जीवन सम्बन्धक अछि कएल अनेक,

आत्मबलक उपयोग, मानसिक शक्ति
यौगिक ज्ञान विकाश कएल बहु भाँति।
किन्तु, जखन एहि सभसँ किछु उपकार
भेल न संसारक, जागृति, उत्साह
यदि हम नहि आनल लोकक बीच,
निष्फल निश्चय तखन हमर सभ कर्म्म,
निष्फल, पाप-कलङ्कित, यदि मम हेतु
दुइ जीवक जीवन दुख संकुल भेल !
ईश्वर !
हमरा क्षमा करिअ;—मम पुत्र,
'सरला' केँ देखिअ हम पुनि भरि आँखि,
हमर मनोरथ पूर्ण करिअ, भगवान !

× × ×

एकमात्र सन्तति परिपालन कर्म्म
मुख्य धर्म्म लए सरला कएल व्यतीत
वर्ष अनेक। रमेशक सुन्दर कान्ति
बढ़ल क्रमहिँ वयसक सङ, स्वस्थ शरीर;
दशम वर्ष उपनीत, सुसंस्कृत - बुद्धि,
अध्ययनक आवेश भरल सुत देखि,
धैर्य्य धरथि सरला, काटथि दिन, मास।

किन्तु समाजक शासक-नीति-(अनीति ?)
निर्म्मम, करुणाहीन। आज सभ लोक
हृदयहीन भए, बाजए—"बारह वष
बीति गेल, अछि कतहु न किछु सम्प्राप्त
दीर्घ अवधिसँ शिवनाथक सन्धान !........
....अस्तु शास्त्र निर्दिष्ट कर्म्म कर्त्तव्य !...."
कर्णाकर्णि सुनल सरला, हत-ज्ञान
मेलि, यथा हृदयक ऊपर पविपात
होअ अचानक; नहि किछु मुह बिच बात,
अश्रु नयन नहि, शून्य हत-प्रभ खिन्न,
छिन्न-पक्ष, शर-विद्ध विहगसम आर्त्त,
खसलि भूमि असहाय,—
क्षणक पश्चात
उमड़ल अश्रु-वेग, नीरव, अज्ञात,
उद्वेलित, दुख-सीदित हृदय विचूर्ण,
मुखसँ बहराएल केवल—"भगवान !—
ई की उचित ! हमर संचित सभ धर्म्म-
कर्म्मक फल एहि रूप !
हुनक 'संस्कार' !
छथि नहि ओ जीवित ? मिथ्या ई बात,

प्रबल असत्य,—हमर अन्तस्तल, मोन,
आत्मा कहइछ, जीवित छथि मम देव !
....

भए सकैछ, ओ छथि कहुँ निर्जन स्थान,
ज्ञानार्ज्जन छल संतत हुनकर ध्येय,—
....एकान्तक प्रिय छला, घृणित दुष्कर्म्म
संसारक प्रपञ्चसँ चाहथि त्राण।.......
.......सएह पठन-पाठन वा योग-समाधि
बिच छथि लीन—हुनक अन्तिम संस्कार—
जीवित व्यक्तिक ?....निश्चय जीवित नाथ !
की नहि आबि बचाओब पाप, कलङ्क ?
कोन हमर अपराध जकर ई शास्ति ?
छल अहाँक हमरा प्रति प्रेम अगाध;
नहि कहिओ कटु वचन कहल, नहि क्रोध,
विमुख न भेलहुँ कखनहु, तखन किएक,
कोन अपन दुष्कर्म्मक ई संताप,
जेहि कारण हम देखब अपन समक्ष
जीवित-जीवन-नाथक मृत्युक खेल !
....

धर्म्मक नामे होइछ एतए अधर्म्म !

ई समाज, सुख दिनमे एकर महत्व।
हृदीय-हीन, निर्म्मोह, अपन अस्तित्व
राखए हेतु करए कत' अत्याचार !
सबल-लोक-सञ्चालित, ध्येय-विहीन,
सीदित, निर्ब्बल लोक पाबि सभ ज्ञान
शास्त्र-पुराणक वचन, आओर उपदेश
दए, करइछ साधन, कर्त्तव्य कठोर !
वैयक्तिक जीवन सुख-दुख, संताप
करए न तिलभरि विचलित हिअ-पाषाण !
ई समाज ! ई धर्म्म ! आओर ई न्याय !!
....

हे भगवति, भगवान, हमर ई लाज
राखिअ, अहिंक हाथ ई, अहिंक भरोस !...."
शोक-मग्न विलपथि सरला एहि भाँति—
नहि भोजन, नहि निद्रा, नहि आराम—
रात्रिन्दिव रोदन, आतङ्कित चित्त,
रज्जुबद्ध-बलि-पशुसम खिन्न उदास।
सन्तापित जर्ज्जरित शरीर, असह्य
दुःख-भारसँ भेल क्लान्त अस्वस्थ,—
ह्रास क्रमहिँ, मृत्यु-कपथ, रोगग्रस्त.......।

जीवन मृत्युक बिच सरला—(एहिकाल
कत व्यक्तिक आश्वासन, धैर्य प्रदान····!)
घृणित भावसँ देखथि जन संसार,
करथि प्रलाप विमन मन, होथि अधीर,
बाजथि उच्चस्वरसँ भए विक्षिप्त ।
····लए निज पुत्रक हाथ, शान्त किछु काल
रहथि, निहारथि शुष्क कमल मुख म्लान,
हुनक माथ निज उर लए, मौन सयत्न,
प्रबल हृदय-स्पन्दन स्वरसँ आशीष
देथि, करथि लोचन जलसँ अभिषेक ।
....

अन्तिम दिन, किछु प्रहरक अवधि निदान
शोक-मग्न सभ लोक;—
अचानक एक—
दीर्घ शरीर, बढ़ल दाढ़ी अरु केश,
रुक्ष, मलिन कृश गात्र—व्यक्ति—शिवनाथ!
साश्रु-नयन सभ, आश्चर्यित, अति क्षुब्ध,
कहि न सकल किछु; वृद्ध जनक पदधूलि
लए शिवनाथ, प्रवेश कएल गृह शीघ्र,
आतुर-कण्ठहिँ 'सरला' ! मात्र उचारि।

तत्क्षण स्तम्भित भए देखल,—कत लोक,
सरला पड़लि····आओर किछु किछु अस्पष्ट
नीहारावृत सम सभ दृश्य विलोप
भेल,—क्रमहिँ चक्षुक समक्ष पुनि स्पष्ट।
उच्चस्वर-आहूत-नाम निज सूनि
सरला कए संचित चेतनता, शीघ्र
खोलल आँखि, अचल पलकहिँ किछु काल
देखल सम्मुख,—देखल निज पतिदेव—
इष्टदेव ! अन्तिम अभिलाषा पूर्ण !!
दीप शिखा केरि अन्तिम ज्योति समान
भेल प्रसन्न क्षणिक, मुख-कमल-मलान;
....

दुहु कर माथ लगाओल, कएल प्रणाम।
महाशान्ति-शायिनि, निष्कम्प शरीर,
अबला सरला, वाचा-शक्ति विहीन,
हृदयक सभ वेदनापूर्ण सन्देश
कएल समर्पित निज प्रिय सम्मुख आर्त
निश्च-लनयन-नीरभाषासँ आज।

× × ×

अन्तिम पल अन्तिम श्वासक आवेग

दखल सभ किछु 'शिव', निश्चल, पाषाण
मूर्ति समान ठाढ़, उद्वेग विहीन,
क्षुब्ध यथा हृत्स्पन्दनहीन मनुष्य ।
अन्त !

खसल निश्चेष्ट भूमि शिवनाथ ।
बहुत दिवस पर जननिक मृत्युक बाद,
आइ प्रथम, ई मोह, शोक-आवेग
कएलक शुष्क हृदयपर कठिन प्रहार !

× × ×

ग्रामक वयोवृद्ध जन, शोकित, आबि
कहल शान्त्वना वाक्य, देल कत धैर्य ।
ऊठल 'शिव', अरु देखल सभकें, शान्त,
बाजल मन्दहास्य युत,—निश्चय सत्य !
हम संन्यासी,—शिवानन्द—संन्यस्त !!!